तीर्थंकर-स्तवन

जो मैं वह परमातमा, जो जिन सो मम रूप।
चिदानन्द चैतन्यमय, सत् शिव शुद्ध स्वरूप।।

१. श्री आदिनाथ स्तवन

सकल[१] कर्म जिनने धो डाले, वे हैं आदिनाथ भगवान।
लोकालोक झलकते जिसमें, ऐसा प्रभु का केवलज्ञान।।
तीर्थंकर पद के धारक प्रभु! दिया जगत को तत्त्वज्ञान।
दिव्यध्वनि द्वारा दर्शाया, प्रभुवर! तुमने वस्तु-विज्ञान।।

१. पाप-पुण्यरूप समस्त घाति-अघाति भावकर्म, द्रव्यकर्म एवं नोकर्म

२. श्री अजितनाथ स्तवन

अनन्तधर्ममय मूलवस्तु है, अनेकान्त सिद्धान्त महान।
वाचक-वाच्य नियोग के कारण, स्याद्वाद से किया बखान।।
आचार अहिंसामय अपनाकर, निर्भय किए मृत्यु भयवान।
परिग्रह संग्रह पाप बताकर, अजित किया जग का कल्याण।।

३. श्री संभवनाथ स्तवन

जिनका केवलज्ञान सर्वगत[१], लोकालोक प्रकाशक है।
जिनका दर्शन भव्यजनों को, निज अनुभूति प्रकाशक है।।
जिनकी दिव्यध्वनि भविजन को, स्व-पर भेद परिचायक[२] है।
ऐसे संभवनाथ जिनेश्वर, मोक्षमार्ग के नायक हैं।।

१. तीन लोक को जाननेवाला, २. बतानेवाली

४. श्री अभिनन्दननाथ स्तवन

''मैं हूँ स्वतंत्र स्वाधीन प्रभु, मेरा स्वभाव सुखनन्दन है।
राग रंग अरु भेदभाव में, भटकन ही भव बन्धन है।।''
यह तथ्य बताया है जिसने, वे तीर्थंकर अभिनन्दन हैं।
त्रैलोक्य दर्शि अभिनन्दन को, मेरा शत-शत अभिवन्दन है।।

५. श्री सुमतिनाथ स्तवन

सुमति जिन की साधना को, श्रेष्ठतम जो मानते।
सुमतिजिन के जिनवचन[१], को ज्येष्ठतम[२] जो जानते।।
जिनके परम पुरुषार्थ में, निज आत्मा ही है प्रमुख।
वे मुक्तिपथ के पथिक हैं, संसार से वे हैं विमुख।।

१. दिव्यध्वनि २. सबसे बड़ा

६. श्री पद्मप्रभ स्तवन

महामोह के घने तिमिर[१] को, सम्यक् सूर्य भगाता है।
मोह नींद में सोये जग को, दिनकर[२] दिव्य जगाता है।।
ज्ञान द्वीप जगमग ज्योति से, मुक्तिमार्ग मिल जाता है।
पद्मप्रभ की शरणागत से, भवबन्धन कट जाता है।।

७. श्री सुपार्श्वनाथ स्तवन

पत्थर सुपारस है वही, सोना करै जो लोह को।
भगवन सुपारस है वही, भस्मक करै जो मोह को।।
सर्वज्ञ समदर्शी[३] सुपारस, शिवमग[४] बताते जगत को।
सप्तम सुपारस नाथ जिन, भगवन बनाते भगत को।।

१. अंधकार, २. सूर्य, ३. वीतरागी, ४. मार्ग

८. श्री चन्द्रप्रभ स्तवन

चन्द्र जिनका चिह्न है, वे चन्द्रप्रभ परमातमा।
जो चलें उनके पंथ पर, वे भव्य अन्तरातमा।
जो जानता उनको नहीं, वह व्यक्ति है बहिरातमा।।
जो पूजता उनके चरण, वह आत्मा धर्मात्मा।।

९. श्री सुविधिनाथ स्तवन

अष्टविधि[१] से रहित हो, फिर भी कहाते सुविधि नाथ।
तिल-तुष परिग्रह भी नहीं, फिर भी कहाते त्रिजगनाथ[२]।।
जो शरण उनकी लेत है, वह होत भवदधि[४] पार है।
अक्षय अनन्त ज्ञायक प्रभु की, वन्दना शत बार है।।

१. कर्म, २. तीनलोक के स्वामी, ३. संसार-सागर

१०. श्री शीतलनाथ स्तवन

चन्दन सम शीतल हो प्रभुवर, चन्द्र किरण से ज्योतिर्मय[१]।
कल्पवृक्ष से चिह्नित हो अरु, सप्तभयों से हो निर्भय।।
तुमसा ही हूँ मैं स्वभाव से, हुआ आज मुझको निर्णय।
अब अल्पकाल में ही होगा प्रभु, मुक्तिरमा से मम परिणय[२]।।

११. श्री श्रेयांसनाथ स्तवन

कोई किसी का नाथ नहीं, फिर भी तुम नाथ कहाते हो।
श्रेयस्कर[३] कर्तृत्व नहीं, फिर भी श्रेयांस कहाते हो।।
जिनवाणी का वक्तृत्व[४] नहीं, पर मोक्षमार्ग दर्शाते हो।
अरस अरूपी हो प्रभुवर! अमृत रसधार बहाते हो।।

१. प्रकाशयुक्त, २. विवाह, ३. कल्याणकारी, ४. बोलना

१२. श्री वासुपूज्य स्तवन

वस्तुस्वातंत्र्य सिद्धान्त महा, कण-कण स्वतंत्र बतलाता है।
फिर कोई किसी का कर्ता बन, कैसे सुख-दुःख का दाता है?
हो वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, अतः बन गये परम पूज्य।
सौ इन्द्रों द्वारा पूज्य प्रभो! इसलिए कहाये वासुपूज्य।।

१३. श्री विमलनाथ स्तवन

हे विमलनाथ! तुम निर्मल हो, कोई भी कर्मकलंक नहीं।
हो वीतराग सर्वज्ञदेव, पर का किंचित् कर्तृत्व नहीं।।
निर्दोष मूलगुण चर्या से, मुनिमार्ग सिखाया है तुमने।
द्वादशांग जिनवाणी से, शिवमार्ग बताया है तुमने।।

१४. श्री अनन्तनाथ स्तवन

अनन्त चतुष्टय आलम्बन से, जीते क्रोध काम कल्मष।
भेदज्ञान के बल से जिसने, जीते मोह मान मत्सर[१]।।
शुक्ल ध्यान से जो करते हैं, घाति-अघाति कर्म भंजन[२]।
ऐसे अनन्त नाथ जिनवर को, मन-वच-काया से वन्दन।।

१५. श्री धर्मनाथ स्तवन

दया धरम है दान धरम है, प्रभु पूजा धर्म कहाता है।
सत्य-अहिंसा त्याग धरम, जन सेवा धर्म कहाता है।।
ये लोक धरम[३] के विविध रूप, इनसे जग पुण्य कमाता है।
शुद्धातम का ध्यान धरम, बस यही एक शिवदाता है।।

१. ईर्ष्या, २. नष्ट करना, ३. जिन्हें लोक में धर्म संज्ञा प्राप्त है

१६. श्री शान्तिनाथ स्तवन

निज स्वरूप सरवर[१] में जिनवर, नियमित नित्य नहाते हो।
अपने दिव्य बोधि[२] के द्वारा, विषय-विकार बुझाते[३] हो।।
परम शान्त मुद्रा से मुद्रित, शान्ति-सुधा बरसाते हो।
परम शान्ति हेतु होने से, शान्तिनाथ कहलाते हो।।

१७. श्री कुन्थुनाथ स्तवन

देवेन्द्रचक्र[४] से चयकर[५] प्रभु ने, पुनर्जन्म का अन्त किया।
राजेन्द्रचक्र[६] को त्याग कुन्थु ने, मुक्तिमार्ग स्वीकार किया।
धर्मेन्द्रचक्र[७] को धारण कर, जिनशासन का विस्तार किया।
सिद्धचक्र में शामिल होकर, निजानन्द रसपान किया।।

१. तालाब, २. रत्नत्रय, ३. शमित करना, ४. इन्द्रपद, ५. मरण कर, ६. चक्रवर्ती का चक्ररत्न, ७. तीर्थंकर का चक्र

१८. श्री अरनाथ स्तवन

हे अरनाथ ! जिनेश्वर तुमने, छह खण्ड छोड़ वैराग्य लिया।
चक्र-सुदर्शन त्यागा तुमने, धर्मचक्र शिर धार लिया।।
सिद्धचक्र के साधनार्थ[१] प्रभु! सकल परिग्रह त्याग दिया।
शुक्लध्यान की सीढ़ी चढ़, सुखमय अर्हत्पद प्राप्त किया।।

१९. श्री मल्लिनाथ स्तवन

हे मल्लिनाथ ! तुम परमपुरुष हो, मंगलमय हो प्रभुवर आप।
भक्तिभावना से हे भगवन! भक्तजनों के कटते पाप।।
प्रभो! आपका भक्त कभी भी, अधोगति[२] नहीं जाता है।
निजस्वभाव को पाकर प्रभुवर, शीघ्र मुक्तिपद पाता है।।

१. साधना के लिए, २. नरक-तिर्यंचगति

२०. श्री मुनिसुव्रतनाथ स्तवन

मिथ्यादर्शन-क्रोध-मान को, दुःखद बताया हे जिननाथ!
माया-लोभ कषाय पाप का, बाप बताया सुव्रतनाथ।।
शरण आपकी पाने से, भविजन होते भव सागर पार।
हे मुनिसुव्रतनाथ ! आपको, वन्दन करते सौ-सौ वार।।

२१. श्री नमिनाथ स्तवन

हे नमि! तेरी अर्चन-पूजन, पापों से हमें बचाती है।
समयसार की सात्त्विक[१] चर्चा, शिव सन्मार्ग दिखाती है।।
जिनवर! तेरी दिव्यध्वनि मम, मोह तिमिर हर लेती है।
भवभ्रमण का अन्त करा कर, मोक्ष सुलभ[२] कर देती है।।

१. पवित्र वीतरागी चर्चा, २. सरलता से प्राप्त करना

२२. श्री नेमिनाथ स्तवन

तीन लोक में सार बताया, वीतराग विज्ञानी को।
भव सागर में दुःखी बताया, मिथ्यात्वी अज्ञानी को।।
मुक्तिमार्ग का पथिक बताया, स्व-पर भेदविज्ञानी को।
सहज स्वभाव सरलता से सुन! नेमिनाथ की वाणी को।।

२३. श्री पार्श्वनाथ स्तवन

पारस पत्थर छूने से ज्यों, लोह स्वर्ण हो जाता है।
पार्श्वप्रभु की शरणागत से, पाप मैल धुल जाता है।।
जो भी शरण गहे पारस की, आनँद मंगल गाता है।
पार्श्व प्रभु के आराधन से, पतित पूज्यपद पाता है।।

२४. श्री महावीर स्तवन

जो निज दर्शन ज्ञान चरित अरु, वीर्य गुणों से हैं महावीर।
अपनी अनन्त शक्तियों द्वारा, जो कहलाते हैं अतिवीर।।
जिसके दिव्य ज्ञान दर्पण में, नित्य झलकते लोकालोक।
दिव्यध्वनि की दिव्यज्योति से, शिवपथ पर करते आलोक।।

जिन-सा निज को जानकर, जो ध्याते निजरूप।
वे पाते अरिहन्त पद, भोगें सुख भरपूर।।

तीर्थंकर स्तवन

रचयिता
पण्डित रतनचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.

श्री देव-शास्त्र-गुरु स्तवन

जिनवर के दर्शन-पूजन से, पापों का पुंज प्रलय होता।
श्रुत के वचनामृत सुनने से, विपरीत-विभाव विलय होता।।
घन-रूप दिगम्बर दर्शन से, मन-रूप मयूर मुदित होता।
निजनाथ निरंजन अनुभव से, समकित का सूर्य उदित होता।।
जिनवाणी नित बोधनी, सुलभ रहै दिन-रैन।
वीतरागता में निमित्त, वीतराग जिन-बैन।।
निर्विकार निर्ग्रन्थ मुनि, यथा जिनेश्वर बिम्ब।
बाहर की यह नग्नता, अन्तर का प्रतिबिम्ब।।
निश-दिन निज का चिन्तवन, चर्चा निज की होय।
चर्या में निज ही प्रमुख, चाह अन्य नहिं कोय।।

देव का स्वरूप

वीतराग-सर्वज्ञ प्रभु, जगतबन्धु जिननाम।
चिदानन्द चैतन्यमय, शिवस्वरूप सुखधाम।।
जो मैं वह परमातमा, जो जिन सो मम रूप।
चिदानन्द चैतन्यमय, सत् शिव शुद्ध स्वरूप।।
सत् स्वरूप चैतन्यघन, चिदानन्द सुखसिन्धु।
अवगाहन जो जन करें, पर होंय भवसिन्धु।।
जिन-सा निज को जानकर, जो ध्याते निज रूप।
वे पाते अरहन्त पद, भोगें सुख भरपूर।।